तृतीय अध्याय
राजेंद्र यादव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

तृतीय अध्याय : राजेंद्र यादव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

- राजेंद्र यादव
- जन्म
- बचपन
- शिक्षा
- नौकरी
- पिता की मृत्यु
- परिवार का संस्कार
- आगरा से कोलकाता
- विवाह
- आदतें और शौक
- मार्गदर्शक और मददगार
- निःस्वार्थी
- स्वाभिमानी एवं संवेदनशील
- लेखन के प्रति दृष्टिकोण
- निष्कर्ष
- राजेंद्र यादव का कृतित्व
- राजेंद्र यादव की कृतियाँ
- निष्कर्ष

तृतीय अध्याय : राजेंद्र यादव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

राजेंद्र यादव :

हिंदी के जाने-माने साहित्यकार राजेंद्र यादव, हिंदी लेखकों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य को राजेंद्र जी की देन अनुपम है। उन्होंने लेखन को स्वतंत्र रूप में स्वीकारा। उपन्यासकार, कहानीकार, कवि, प्रकाशक, संपादक, अनुवादक तथा समीक्षक के रूप में राजेंद्र जी ने हिंदी साहित्य के क्षेत्र में विशेष ख्याति अर्जित की है। राजेंद्र जी अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता, परिवेश-संगत संश्लिष्ट व्यक्ति-चित्रण एवं अनुभव की प्रमाणिकता के कारण आधुनिक हिंदी कथा साहित्य की यथार्थवादी परंपरा के महान लेखक बन गए। परिवेशबोध की विकसित चेतना और अभिव्यक्ति की क्षमता के कारण उनकी सभी रचनाएँ विशिष्ट बन गई। नई पीढ़ी के यथार्थवादी कथाकार राजेंद्र जी प्रेमचंद के कृतित्व एवं परंपरा के सामाजिक यथार्थ की प्रेरणा ग्रहण कर, एक सजग समस्यामूलक कथाकार होने के नाते उन्होंने युगजीवन को उसके सारे अंतर्विरोधों के साथ बड़ी बारीकी से परखते हुए अपने कृतित्व में प्रस्तुत किया। राजेंद्र जी की कहानियाँ

एवं उनके उपन्यासों में निजी व्यक्तित्व के विविध पक्षों के अक्षुण्ण प्रभाव को देखा जा सकता हैं। राजेंद्र जी के कथा साहित्य का समग्र विवेचन करने से पूर्व उनके निजी तथा लेखकीय व्यक्तित्व के विविध पक्षों का अन्वेषण उनकी रचना दृष्टि एवं संवेदना के मूल कारणों को पहचानने में सहायक प्रतीत होता है।

उन्होंने 'सारा आकाश' 'उखड़े हुए लोग' 'अनदेखे अनजान पुल' जैसे अनेक साहित्य कृतियाँ हिंदी उपन्यास साहित्य को प्रदान की हैं। राजेंद्र यादव जी ने यथार्थ जीवन की झाँकी अपने उपन्यासों में दिखाई है। वे मध्यवर्गीय लोगों से आये हुए लेखक हैं। अतः उनके उपन्यासों में मध्यवर्गीयों की समस्याएँ हकीकत दिखायी देती हैं। पाठक की भावनाओं को छूना हर लेखक के बस की बात नहीं है। इंसान लेखक तभी बन सकता है जब वह जीवन की समस्याओं से गुजरा हो, उनका सामना किया हो। हकीकत क्या होती है? भूख किसे कहते हैं? खून के रिश्ते क्या होते हैं? यह ऐसी बात है जिसे एक सहृदय लेखक ही महसूस करके पाठकों के सामने प्रस्तुत कर सकता है तब एक लेखक का जन्म होता है।

प्रत्येक लेखक के जीवन का उसके व्यक्तित्व से गहरा संबंध होता है। लेखक के जीवन में उसने जो महसूस किया है उसका उसके व्यक्तित्व का उसकी रचनाओं के साथ अटूट संबंध होता है। राजेंद्र यादव को अच्छी तरह से समझना हो तो उनके जीवन, परिवेश आदि को देखना जरूरी है।

जन्म :

राजेंद्र यादव का जन्म 28 अगस्त 1929 को आगरा, उत्तर प्रदेश में हुआ। राजेन्द्र जी का ज्यादातर समय आगरा के 'राजा की मंडी' नामक स्थान में एक संयुक्त परिवार बीता। आगरा के राजा की मंडी मुहल्ले में उनके पिता का घर है। इसी घर में राजेंद्र यादव का जन्म हुआ। राजेंद्र यादव अपने माता-पिता की प्रथम संतान हैं। इसलिए उनका जन्म घर वालों के लिए बहुत खुशी भरा था। उनका जन्म एक संयुक्त परिवार में हुआ था। घर का

माहौल शैक्षिक होने के कारण उनके अच्छे संस्कार हुए और इन्हीं संस्कारों के कारण राजेंद्र यादव एक सफल साहित्यकार बन सके।

राजेंद्र यादव जी ने अपने बारे में बहुत कम लिखा है। उसके विचार हैं कि - "कलाकार का व्यक्तित्व, उसका परिचय, उसका विश्वास और उसकी प्रतिबद्धता- सभी कुछ उसकी कला होती है। जो कुछ वहाँ नहीं है, उसका महत्व और मूल्य क्या और क्यों हो? क्षमा करना मैं उन लोगों के वर्ग में अपने को नहीं पाता, जिनके व्यक्तिगत विश्वास, व्यक्तिगत प्रतिबद्धता और जीवन अर्थात व्यक्तित्व उनके कला-व्यक्तित्व से अलग होता है।"1 राजेंद्र यादव जी का व्यक्तित्व उनके पात्रों द्वारा हमारे सामने आता है। राजेन्द्र जी ने अपने साहित्य में व्यक्तिगत जीवन के अनुभवों को ही विषय बनाया है। वे लिखते हैं कि- "एक तरह देखा जाए तो सारा ईमानदार कथा-लेखक औरों के यानी पात्रों के बहाने अपनी ही बात कहता है। कहीं बात घटनाओं वार्तालापों और चरित्रों के स्तर पर होती है तो कभी अनुभवों, स्थितियों और उनकी प्रतिक्रियाओं के रूप में, कहीं इन सबसे भी गहरी उतरकर संवेदना और अवधारणाओं, आस्था और निष्ठा की शक्ल में, होता सब अपना या आत्मकथ्य ही है।"2 इसके आगे उनका प्रश्न है- क्या ईमानदार कथा लेखक के पास ऐसा कुछ बचा रहता है कि वह अलग से आत्मकथा लिख सके?

राजेंद्र यादव मध्यवर्गीय समस्याओं से जूझे हैं, उनको महसूस किया, तभी तो वह इसे इतनी अच्छी तरह से प्रस्तुत कर सके हैं। उन्होंने समाज में देखे पात्रों को ही अपने उपन्यासों में स्थान दिया है। उन समस्याओं को देखा, सुना, भुकता, अनुभव कर उन्होंने अपनी बात कहने की कोशिश की है।

माता-पिता :

राजेंद्र यादव के पिताजी का नाम मिश्रीलाल था। वह गोकुल सिंह यादव के पुत्र थे। गोकुल सिंह यादव उस काल में बी.ए. किए थे। और आगरा कमिशनरी में हेड क्लर्क की नौकरी करते थे। गोकुल सिंह यादव के छः बेटे थे। उनमें मिश्रीलाल चौथे नंबर वाले बेटे थे। "मिश्रीलाल ने इंटर पास कर एल.एम.पी. (लायसेंस आफ मेडिकल प्रैक्टिस) का

डिप्लोमा कोर्स पूर्ण किया और जीविका के लिए डॉक्टरी पेशा अपना लिया। मिश्रीलाल के दो विवाह हुए थे। विवाह के उपरांत वे गृहस्थ बनकर वैवाहिक जीवन बिताने लगे थे, कि अकस्मात पत्नी का देहांत हुआ। पत्नी की मृत्यु के दो वर्ष पश्चात उन्होंने ताराबाई से दूसरा विवाह किया।"3 राजेन्द्र यादव इन्हीं लोगों (मिश्रीलाल-ताराबाई) की प्रथम संतान थे। मिस्त्रीलाल यादव उर्दू पढ़ने में रुचि रखते थे। 'चंद्रकांता संतति' उपन्यास पढ़ने के लिए उन्होंने हिंदी सीखी थी।

राजेंद्र यादव जी के माता का नाम ताराबाई था। ताराबाई एक महाराष्ट्रीयन परिवार में पली बढ़ी मराठी भाषी नारी थी। राजेंद्र जी अपनी माता के बारे बताते है कि "मेरी माँ का नाम ताराबाई था। ताराबाई के पिताजी श्री रामसिंह जाधव महाराष्ट्र के अमरावती के निवासी थे। वे मराठी भाषी थे। विधवा विवाह आदि के जरिए समाज सुधार का कार्य करते थे। खेती उनका प्रमुख व्यवसाय था। कुछ दिनों बाद वह अमरावती छोड़कर मध्यप्रदेश के अशोकनगर में आ बसे यहाँ आकर उन्होंने पुस्तक की दुकान खोल दी और यहीं स्थाई हो गये। ताराबाई उन्हीं के साथ थी।"4 इसी ताराबाई के साथ राजेंद्र यादव के पिता श्री मिस्त्रीलाल यादव का विवाह हुआ। ताराबाई मराठी पढ़ती थी उन्हें हिंदी नहीं आती थी। उन्हें हिंदी सिखाने के लिए ट्यूटर रखा गया। उन्हें पढ़ने का बहुत शौक था। वे तीसरी कक्षा तक पढ़ी थी उनमें पढ़ने की बहुत लगन थी। वह घर में पढ़ने के लिए हिंदी-मराठी पत्रिकाएँ मंगवाती थी।

परिवार :

मिस्त्रीलाल यादव और ताराबाई ने दस बच्चों को जन्म दिया। राजेंद्र यादव उनके प्रथम पुत्र हैं। राजेंद्र का वास्तविक नाम राजेंद्र सिंह यादव था। आगे चलकर राजेंद्र सिंह यादव ने अपने नाम के आगे से 'सिंह' हटा दिया। वे तीन भाई और छः बहनों के बड़े भाई हैं। घर में बड़े होने के कारण राजेन्द्र जी को बहुत प्यार-दुलार मिला। "छः बहनों में से एक की मृत्यु हो गयी और शेष पाँच में से दो दिल्ली, दो जयपुर तथा एक अमेरिका में स्थायी हो चुकी हैं ये सभी बहनें एम.ए. तक की पढ़ाई की हैं। तीनों भाइयों में से दो आगरा में और

एक फिरोजपुर में स्थाई बस गये हैं। उनमें से एक भाई इंजीनियरिंग, एक भाई बी.एस.सी. और एक भाई बी.ए. कर चुका है।"5 राजेंद्र यादव के पितामह श्री गोकुल सिंह बी.ए. तक पढ़े थे। इसलिए उनके घर का माहौल शिक्षा के अनुकूल था। अतः उनके सब बेटे और बेटियों ने अच्छी शिक्षा प्राप्त की। राजेन्द्र जी का परिवार सुशिक्षित मध्यवर्गीय परिवार है।

बचपन :

राजेंद्र यादव का जन्म संयुक्त परिवार में हुआ था। इस संयुक्त परिवार में माता-पिता, भाई-बहन, के साथ-साथ चाचा-ताऊ आदि का समावेश था। चाचा-ताऊ में से चार बाहर नौकरी करते थें तथा दो आगरा में रहते थे। आगरा में रहने वाले उनके बड़े ताऊ को कबूतरबाजी का बहुत शौक था। इन्हीं के प्रभाव से राजेंद्र यादव का बचपन "कबूतरबाजी" और "पतंग उड़ाने" में बीता था। कबूतरों के बारे में वे इतना जानते थे कि उतना बहुत कम लोग ही जानते होंगे। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में बचपन का काल महत्वपूर्ण होता है। यही काल कुछ सीखने का होता है। राजेन्द्र यादव का बचपन आगरा स्थित अपने पैतृक घर में बिता। इनके घर का आकार विस्तृत था जिसमें पुराने पन की खुशबू थी। राजेन्द्र जी अपने पुराने घर के प्रति गहरा लगाव था। आगे चलकर उनके घर में बटवारा हो गया, उसके बाद उनके पिता मिश्रीलाल ने उसी मोहल्ले में दूसरा घर बनवाया फिर भी वे बहुत दिनों तक पुराने घर में ही रहें। वे स्वयं बताते हैं- "उसी खुसबू और बेढंगेपन में छतों पर कबूतरबाजी और पतंग उड़ाने में बचपन और किशोर्य बीता था।"6 राजेंद्र यादव जी ने किशोरावस्था का महत्त्व बताते हुए कहा है- "कलाकार अपने किशोर काल के 'अपने यथार्थ से' असंयुक्त नहीं हो पाता वह या तो उसमें रस लेता है या उसे जस्टिफाई करता है और जिंदगीभर कला के नाम पर आत्मकथा के टुकड़े देता है।"7

अपने माता-पिता के अलावा छः चाचाओं तथा नौ भाई-बहनों के साथ राजेंद्र यादव का बचपन बीता। इस परिवार के सदस्यों के आपसी संबंध कैसे थे? इसका ब्यौरा कहीं भी नहीं मिलता। लेखक जब नौ साल का था तब उसकी टांग टूट गयी थी। विकलांगता का लेखक पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। इस क्षति की पूर्ति के लिए बौद्धिक क्षेत्र में वह आगे

बढ़ गये। बचपन के दिनों में ही उन्होंने भिक्खी चाटवाले से बहुत सारी कहानियाँ सुनी थी। इस प्रकार उनके मन पर बचपन से ही कहानियों का संस्कार होते आये हैं। यही संस्कार उनके लेखकीय व्यक्तित्व में बहुत सहायक बन गये हैं। उनके द्वारा लिखित 'सारा आकाश' इसी संयुक्त परिवार की देन है। जिसमें नव विवाहित पति-पत्नी की त्रासदी का चित्रण है।

शिक्षा :

राजेन्द्र यादव जिस संयुक्त परिवार में पले-बढ़े वह सुशिक्षित मध्यवर्गीय परिवार था। राजेंद्र यादव के पिता मिस्त्रीलाल यादव को उर्दू में रुचि थी। अतः उन्होंने राजेंद्र को प्रारंभिक शिक्षा उर्दू में ही दी। प्रेमचंद के समान ही राजेंद्र यादव पहले उर्दू में पढ़े और बाद में हिंदी में आये। बचपन से उन्हें कहानी सुनने का बहुत शौक था। भिक्खी चाटवाला अक्सर उन्हें कहानियाँ सुनाया करता था।

राजेंद्र जी की प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण होने के बाद उन्हें आगे की शिक्षा के लिए उनके चाचा के यहाँ मवाना भेजा गया। ये चाचा परिवार में सबसे शिक्षित और बुद्धिमान थे। पढ़ाई के साथ-साथ राजेन्द्र को खेल का बहुत शौक था। उस समय राजेन्द्र का पसंदीदा खेल हॉकी था। एक दिन हाकी खेलते समय एक लड़के ने हॉकी से उनके पैर में मार दिया। जिससे उनके पैर में बहुत गहरी चोट लग गयी थी परन्तु चाचा के डर से घर में नहीं बताये। प्रारंभ में प्राथमिक उपचार करवाये परन्तु पैर बहुत फूल गया। उस समय राजेन्द्र जी के पिता झाँसी में नौकरी करते थे। जब उन्हें पता चला तो वे राजेन्द्र को देखने आए और अपने साथ राजेन्द्र को लेकर झाँसी आ गये। झाँसी से मथुरा ले जाकर, मथुरा के अच्छे सर्जन को दिखाकर इलाज करवाया। लेकिन कोई लाभ नहीं मिला। अन्त में डॉक्टर को घुटने के नीचे की एक हड्डी को निकालनी पड़ी। इस कारण राजेन्द्र जी को बैसाखी का सहारा लेना पड़ा। उनका घूमना-फिरना बन्द हो गया। टाँग टूटने के कारण उनकी शारीरिक गतिविधियाँ सीमित हो गयी थी। राजेन्द्र जी को ज्यादा समय तक बिछाने पर ही रहना पड़ा। ऐसी स्थिति में राजेन्द्र जी का दिल बहलाने के लिए उनके पिता जी उनके पास कुर्सी पर बैठकर घंटों तक राजेंद्र जी को 'अलिफ लैला', 'चंद्रकांता', 'चंद्रकांता संतती', 'दास्ताने

अमीर हम्जा' आदि के किस्से सुनाया करते थे। इस विकलांगता की छतिपूर्ति के लिए राजेंद्र का मन रास्ता तलाशने लगा। परिणामतः बौद्धिकता ने इस छति की पूर्ति करवा दी।

राजेन्द्र जी को इस हादसे से जीवन भर के लिए अपाहिज होना पड़ा। घर से बाहर निकलना मुश्किल हो गया। बाहर निकलने पर बच्चें उन्हें लंगड़ा कह कर चिढ़ाते थे। जिससे उनको बहुत दुःख होता था। राजेन्द्र जी ने उस समय अपनी पढ़ाई तक छोड़ने का मन बना लिया था। वे सारा दिन अपने कमरे में पड़े रहते थे। इस विकलांगता के कारण राजेंद्र जी को अपना जीवन अंधकारमय लगने लगा। उनकी सभी गतिविधियाँ सीमित हो गई थी। इसकी छतिपूर्ती के लिए राजेंद्र जी ने मानसिक या बौद्धिक क्षेत्र में उन्होंने अपनी गतिविधियों को बढ़ाया जिसके परिणाम स्वरूप उन्होंने छोटी सी आयु में दुनिया के सबसे बड़े उपन्यास 'दास्तान-ए-अमीर हम्जा' को उन्होंने पढ़ लिया था। "वे 'हजार दास्तान', सिंदबाद जहाजी', हिंदी जादूगर', 'आबेहयात' लाने वाले शहजादों की कहानियाँ पढ़ते थे। इन्हीं तिलिस्मी ग्रंथों के प्रभाव स्वरूप उन्होंने 'कण' नाम से दो तिलिस्मी पुस्तकें किशोरावस्था में ही लिखी थी, जो कभी प्रकाशित नहीं हुई।"8

राजेंद्र जी की मैट्रिक तक की पढ़ाई झाँसी में अपने पिता के साथ हुई। मैट्रिक के आगे की पढ़ाई आगरा में हुई। अपनी कक्षा में वे एक बुद्धिमान छात्र समझे जाते थे। छोटी उम्र से ही राजेन्द्र जी को पढ़ने का बहुत शौक था। आगरा में रहकर राजेन्द्र जी ने हिंदी विषय लेकर बी.ए. किया और 1951 में हिन्दी विषय लेकर एम.ए. की उपाधि प्रथम श्रेणी में हासिल की। इस प्रकार से पढ़ना उनके जीवन का अभिन्न अंग बन गया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में साहित्यकार भी अपना कर्तव्य निभाते थे। राष्ट्र कवि दिनकर भी स्वतंत्रता सेनानी को अपनी ओजपूर्ण, जोशीली कविताओं के माध्यम से प्रेरित करते थे। उनकी इन काव्य पंक्तियों ने राजेन्द्र जी के किशोर मन पर बहुत गहरा प्रभाव डाला -

"सेनानी, करो प्रयास अभय, भावी इतिहास तुम्हारा है,
ये नलत अमा के बुझते हैं, सारा आकाश तुम्हारा है।"

इन पंक्तियों का राजेन्द्र जी पर गहरा प्रभाव पड़ा और इन्होंने अपने उपन्यास 'प्रेत बोलते हैं' के शीर्षक को बदल कर 'सारा आकाश' कर दिया।

इस प्रकार राजेन्द्र यादव के विद्यार्थी जीवन की कुछ घटनाओं का उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा और उनके व्यक्तित्व निर्माण में सहायक सिद्ध हुई। बौद्धिक एवं मानसिक भूख के शिकार होकर वे अपने व्यक्तित्व के विकास की अनंत संभावनाओं को लेकर कार्यरत हुए थे। इस दिशा में उन्हें सफलता भी मिली।

नौकरी :

एम.ए. करने के पश्चात् राजेंद्र यादव चाहते तो छोटी-मोटी नौकरी अवश्य प्राप्त कर सकते थे, लेकिन उनके मन में नौकरी करने की इच्छा न रही, यही अच्छा हुआ कि वह नौकरी के झंझट से दूर रहे, वरना हिंदी साहित्य संसार एक प्रतिभाशाली साहित्यकार से वंचित रह जाता। जीवन में कुछ बनने की अभिलाषा थी इस कारण उन्होंने नौकरी को तिरष्कृत कर दिया था। वे कहते थे कि नौकरी करने वालों की संवेदना सीमित हो जाती है। आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। वे किसी भी हालत में अपने आत्मसम्मान को खोना नहीं चाहते थे। वे अपनी संवेदना को व्यापकता प्रदान करने की तलाश में थे। राजेन्द्र जी के पिताजी मध्यवर्गीय परिवार के गृहस्थ थे। वे हमेशा अपने बड़े पुत्र के लिए चिंतित रहते थे। वे अपने बेटे को नौकरी करते देखना चाहते थे।

राजेन्द्र यादव के गुरुवर्य पंडित जगन्नाथ तिवारी आगरा कॉलेज के विद्वान एवं प्रतिष्ठित प्राध्यापक थे। राजेन्द्र यादव के एम.ए. की डिग्री हासिल करने के बाद उन्हें आशा रही कि हमारा यह प्रतिभाशाली छात्र इसी कॉलेज में अध्यापक बने। लेकिन राजेन्द्र जी ने अपने गुरु जी का कहना विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया और अध्यापक नहीं बने। उन्हीं के शब्दों में -"शायद मैं उस दिन आगरा कॉलेज के स्टॉफ में जाने की बात मान लेता। अगर वह हो जाता, तो पता नहीं आज जिंदगी क्या होती..?"9 राजेन्द्र जी उनके प्रिय छात्र थे। वे अपने छात्र की बुद्धिमत्ता पर हमेशा गर्व करते थे। एक बार गुरु जी ने राजेन्द्र जी की उत्तर पुस्तिका के आदर्श उत्तरों को कक्षा में पढ़कर सुनाया था। इस विषय पर

राजेन्द्र जी कहते हैं कि "मैं जानता था गुरुवर तिवारी जी मुझे बहुत प्यार करते थे, एम.ए. में छमाही इम्तहान की मेरी कापियाँ उन्होंने क्लास में पढ़कर सुनाई थी, मेरा लिखा उन्होंने कितना पढ़ा था, यह तो नहीं पता, लेकिन प्रथम श्रेणी में मेरी पोजीशन और लेखन में होने वाले नाम को लेकर उन्हें बहुत गर्व था...।"10 इस प्रकार उन्होंने नौकरी के प्रति अपनी विरक्ति को व्यक्त किया। लेकिन पिता जी उनके विचार से सहमत नहीं थे। उन्होंने डॉ. पद्मसिंह शर्मा कमलेश के माध्यम से राजेंद्र को समझाने की कोशिश की। उन्हें कमलेश जी ने एकांत में ले जाकर बड़ी आत्मीयता से समझाया कि "बाबूजी यह नहीं चाहते कि तुम उन्हें मदद दो, लेकिन तुम्हारे अपने लेखन, जीवन के लिए बहुत जरुरी है कि आत्म-निर्भर बनो। मेरी तो यही सलाह हैं।"11

परन्तु अपनी बातों पर अड़े राजेन्द्र जी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वे स्वतंत्र रहकर, अपने अनुभवों में वृद्धि करना, घूमना-फिरना और लिखते रहना उन्होंने निश्चय कर लिया था। उन्होंने अपने मन की बात कमलेश जी को बता दी थी - "मैं हमेशा की तरह कुछ भी निर्णय कर सकने में अपने को असमर्थ पा रहा था; सिर्फ इतना साफ था कि किसी नौकरी में नहीं बधना। स्वतंत्र रहना है और लिखना है, जगह-जगह घूमना है, तरह-तरह के लोगों से मिलना है। उन दिनों मैं कभी किसी अनजान स्टेशन पर रात बिताने के सपने देखता था। कभी किसी सुदूर गाँव में अपरिचितों के बीच, कभी बड़े शहर की भीड़ और होटल में खूब घूमूँगा, निरुद्देश्य भटकूँगा और डायरियाँ लिखूँगा, उपन्यास-कहानियाँ लिखूँगा।"12

राजेन्द्र जी को नौकरी करना पसंद नहीं था। उनको कोई बांध कर रखे, उनके स्वाभिमान को चोट पहुँचाये, उन्हें किसी के सामने दबी जुबान से बोलना पसंद नहीं था। उन्होंने समझ लिया था कि नौकरी करने से आत्मसम्मान को ठेस पहुँचता है, संवेदना सीमित हो जाती है। इस प्रकार से वे अपने प्रिय लेखन-कार्य के लिए नौकरी को ठुकरा दिया। उनकी सृजनात्मक कृतियों ने उन्हें लेखक के रूप में स्वतंत्र जीवन जीने के लिए तैयार किया।

पिता जी की मृत्यु :

राजेन्द्र जी के पिताजी सुशिक्षित व्यक्ति के साथ ही वे एक सबल पिता भी थे। उन्होंने दस बच्चों को जन्म देकर उनका पालन-पोषण भी किये थे। उन्होंने अपने बच्चों के लिए नया मकान भी बनवाया था तथा उनकी सभी सुख-सुविधाओं का खयाल रखते थे। राजेंद्र जी अपने पिताजी के सबसे प्यारे और लाडले पुत्र थे। पिताजी अपने बुद्धिमान जेष्ठ पुत्र को बेहद प्यार करते थे। पुत्र की विकलांगता के कारण उनके मन को ज्यादा ठेस पहुँची, इसलिए वह अपने सभी बच्चों से ज्यादा राजेन्द्र जी से प्यार करते थे। लेकिन यह प्यार भी उन्हें बहुत समय तक नहीं मिला। एक दिन किसी मरीज का दांत उखाड़ रहे थे तभी दिल का दौरा पड़ने से सन् 1953 ई. में उनकी मृत्यु हो गयी। पिता की मृत्यु से राजेंद्र जी को बहुत दुःख पहुँचा। वे बहुत दिनों तक इस दुःख को नहीं भूल पाये। पिता के वात्सल्य से वंचित होने के कारण उनके अंतर्मन में उदासीनता और विरक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। पिताजी की अकाल मृत्यु के कारण उनके जीवन में उन्हें अनेक संकटों और दुःखों का सामना करना पड़ा।

परिवार का संस्कार :

परिवार के संस्कार बच्चों पर अवश्य प्रभाव डालते हैं। राजेन्द्र जी पर भी अपने माता-पिता, परिवार के संस्कारों का प्रभाव पड़ा। उनके माता-पिता को पढ़ने का शौक था जो राजेन्द्र जी में भी आया। पिता से केवल शैक्षिक संस्कार ही नहीं, बल्कि खाने-पीने के संस्कार भी प्राप्त हुए। पिता जी से मिले संस्कारों के बारे में राजेन्द्र जी बताते है कि- "उन्हें उड़द की दाल में खूब घी डालकर, सूखे आलुओं की सब्जी से दोपहर का भोजन पसंद था और यही मेरी भी पसंद है, उन्हें दोस्तों को शौक से और खुले दिल से खिलाना अच्छा लगता था, उनकी हर तरह की मदद और सहायता करने में एक आत्मिक सुख होता था, और वही मेरी भी कमजोरी है।"13 राजेंद्र जी अपने पिता की भाँति पानी पीते थे और पीते-पीते अपने पिता के साथ मथुरा में बिताए बचपन के दिनों को स्मरण करना उन्हें बहुत

अच्छा लगता है। लेकिन "आज भी जब मैं सुबह पांच बजे उठकर पाइप पीते हुए अगले या पिछले दिन की बात सोचता हूँ, किसी मुद्दे पर विचार करता हूँ, तो सुरीर के बरामदे की वह तस्वीर मेरे सामने आ खड़ी होती है, जब पिता सुबह पांच बजे उठकर चारपाई पर ही बैठ जाते थे; चुपचाप बीड़ी पीते रहते थे। मुझे नहीं मालूम वे क्या सोचा करते थे। लेकिन लगता है, वह शायद मेरे भीतर मेरे पिता ही हैं।"14 राजेन्द्र जी अपने पिता जी की हर बात का अनुकरण करते ऐसा नहीं है बल्कि कुछ बातों को अस्वीकार भी किये थे। राजेन्द्र जी के शब्दों में- "हाँ, मैं कतई अपना बाप नहीं बनना चाहता, लेकिन स्वीकार-अस्वीकार और अपने समन्वय की प्रक्रिया में उन्हें मैं उपस्थित नहीं पाता, यह कहना गलत है।"15 राजेंद्र यादव में उनके पिता की बहुत सारी खूबियां देखने को मिलती हैं।

आगरा से कोलकाता :

राजेन्द्र जी हमेशा कुछ न कुछ नया करके दिखाने के प्रयास में रहते थे। लिखना उनको बहुत पसन्द था। उन्होंने लेखन को ही अपने जीवन का उद्देश्य बनाया। और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनुभव की आवश्यकता थी जो आगरा जैसे छोटे शहर में रहकर, लेखन करना उन्हें मुश्किल लगा। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने आगरा छोड़कर कोलकाता जाने को बाध्य हुए। 1954 में उन्होंने आगरा से कोलकाता चले गए। कोलकाता जाकर वहाँ की 'नेशनल लाइब्रेरी' में जाकर बहुत सारी पुस्तकें पढ़ी साथ ही वे सुबह-शाम कहानियाँ लिखा करते थे। उन्होंने 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'एक कमजोर लड़की की कहानी' आदि प्रसिद्ध कहानियाँ कोलकाता में लिखी थी।

राजेन्द्र जी को पढ़ने का बहुत शौक था। वे इसी शौक के कारण कोलकाता की नेशनल लाइब्रेरी में पढ़ने जाते थे। चेखव की कहानियाँ, लीडिया ऐविलोव के संस्मरण और ओल्गा निपर के लिखे हुए पत्र पढ़ते रहते थे। एस.एन. दासगुप्ता की 'चिति' और 'ध्यान' पर लिखी पुस्तकें भी पढ़े। और सुबह शाम कहानियाँ लिखा करते थे। इस प्रकार शोधकार्य करने के लिए कोलकाता जाने वाले राजेन्द्र जी, कोलकाता की नेशनल लाइब्रेरी में जाकर

पुस्तकें पढ़ते-पढ़ते वे उपन्यास तथा कहानियाँ लिखने लगे और आज स्वयं ही एक शोध-कार्य का विषय बन गये।

कोलकाता जाने के बाद राजेन्द्र जी के अध्ययन का संसार और भी बड़ा हो गया। वहाँ की नेशनल लाइब्रेरी में जाकर खूब पड़ते थे। पढ़ाई केवल अपने शोधकार्य से सम्बंधित विषय को ही नहीं बल्कि विभिन्न विषयों को लेकर बहुत ही गहराई से अध्ययन करते थे।

वैसे उनके शोध का विषय था- **"योग दर्शन और हिन्दी कविता"**। इसके बारे में राजेन्द्र जी ने बताया है कि- "मैं योग दर्शन और हिंदी कविता पर रिसर्च करने कोलकाता गया हुआ था पर वह एक बहाना ही था। वहाँ नेशनल लाइब्रेरी जाता था, पढ़ता था, पर उन पाँच - छः वर्षों में जो भी पढ़ाई हुई वह चेखव को लेकर हुई।"16 राजेन्द्र जी को उनके मित्र सिंधी जी ने उन्हें शोधकार्य पूरा करने के लिए कहा तो राजेन्द्र जी कहने लगे कि शायद वह भी अब न हो। उनका मन शोधकार्य में बिल्कुल भी नहीं लगता था।

कोलकाता जाकर शोधकार्य करना आसान नहीं था। एक तो उन्होंने नौकरी करने से मना कर दिया था तथा घर से पैसा भी लेना छोड़ दिया था। ऐसे समय में जीवन यापन करने के लिए पैसे की आवश्यकता थी। वहाँ मजबूरी में उन्होंने अपने मित्र भंवरलाल सिंधी से कुछ काम देखने को कहा था तो सिंधी जी ने एक सॉलिसिटर के दो बच्चों को हिंदी पढ़ाने का काम दिया था। सिंधी जी ने कहा था कि- "मैंने बात कर ली हैं। यहाँ एक बहुत ही भले सॉलिसिटर हैं, उनके दो लड़कों को हिंदी पढ़ाना है।"17 राजेन्द्र जी ने यह काम मुश्किल से दो-तीन महीने किए थे। उसके बाद 'प्रगति प्रकाशन' में कुछ समय काम किये। उसके बाद 'ज्ञानोदय' में नौकरी किये। उन्हें यह नौकरी भी अपने स्वभाव और लेखन के प्रतिकूल लगी। राजेन्द्र जी को जहाँ भी अपनी इच्छा के विरुद्ध काम करना पड़ा वहाँ अधिक समय तक टिक नहीं सके। फिर उन्होंने जियोलॉजिकल सर्वे में अध्यापक का काम किया। जियोलॉजिकल सर्वे गृह मंत्रालय की योजना थी जहाँ अहिंदी अफसरों को हिंदी पढ़ाया जाता था। यहाँ उन्होंने हिंदी अध्यापक की हैसियत से नौकरी की परन्तु पाँच-छः महीने बाद इस्तीफ़ा दे दिये। इस प्रकार राजेन्द्र जी अपने उद्देश्य व संवेदना को व्यापक तथा मानवीय आधार देने के यत्न में कई प्रतिकूल परिस्थितियों से जीवन गुजारना पड़ा,

किन्तु एक सच्चे कलाकार के रूप में समस्याओं से जूझकर भी अंततः अपने लेखन-कार्य को निर्बाध ढंग से जारी रखने में सफल भी हुए। जीवन की यथार्थता ने राजेंद्र जी की रचनाओं को पूर्ण क्षमताएँ दी।

कोलकाता में राजेन्द्र जी की किस्मत ने मन्नू भंडारी जी के साथ एक और पन्ना जोड़ दिया। मन्नू जी भी उस समय कहानियाँ लिख रही थी। दोनों लोगों की मुलाकात हो गई जो एक ही रास्ते पर चलने वाले थे।

विवाह :

राजेन्द्र यादव जी का विवाह हिंदी साहित्य की सुप्रसिद्ध लेखिका मन्नू भंडारी जी के साथ हुआ। हिंदी साहित्य की प्रख्यात लेखिका मन्नू भंडारी से राजेंद्र जी का पहला परिचय कोलकाता के बालीगंज शिक्षा सदन में हुआ। मन्नू जी से राजेन्द्र जी की भेंट कब हुई, स्वयं राजेन्द्र जी के शब्दों में- "कलकत्ता के बालीगंज शिक्षा सदन में मुझे लाइब्रेरी के लिए पुस्तकों की सूची तैयार करनी थी। चयन के सिलसिले में इनसे मेरा पहला परिचय हुआ। यों अप्रत्यक्ष परिचय पहले से भी था।"18 मुलाकात के बाद दोनों लोग अपनी लिखी हुई चीजों की बातें करते रहे थे।

मन्नू भंडारी कोलकाता के एक स्कूल में अध्यापिका थी। और लेखन कार्य में रुचि रखती थी। लेखक होने के नाते वे दोनों एक दूसरे को जानते थे। इस समय तक (1959) राजेंद्र जी का उपन्यास 'उखड़े हुए लोग' भी प्रकाशित हो चुका था। लेखन की वजह से राजेंद्र जी और मन्नू जी का परिचय घनिष्ठता में बदल गया और घनिष्ठता कब प्रेम में परिवर्तित हो गया इन लोगों को पता भी न चला। लेखन दोनों लोगों के बीच सेतु बनकर आ गया। दोनों लोग एक दूसरे को जीवन साथी बनाना चाहने लगें। लेकिन मन्नू जी के माता-पिता इस विवाह से सहमत नहीं थे, क्योंकि वे जाति से जैन थे। जबकि राजेन्द्र जी के घर वालों को इस शादी से कोई ऐतराज नहीं था। लेकिन राजेन्द्र जी ने अपनी शादी में आने के लिए अपने घर वालों को बिलकुल मना कर दिये थे। इसके बारे राजेन्द्र जी बताते है कि- "मन्नू के पिताजी को यह रिश्ता स्वीकार न था। वे जाति के जैन थे और उनके जैन

संस्कार बेटी मन्नू का ब्याह क्षत्रिय (राजेन्द्र) से करवा देने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने इसका कड़ा विरोध किया। अपने निर्णय पर मैं और मन्नू अड़े थे, अतः हमें रजिस्टर मैरिज करनी पड़ी। 22 नवंबर 1959 को हम दोनों कानूनन विवाहबद्ध हुए।"19 इस प्रकार अंतर्जातीय विवाह करके सामाजिक और परम्परागत अंधविश्वासों को तोड़ने का सफल प्रयास किए। इनके विवाह में मन्नू जी के जीजा जी ने पूरा सहयोग किया था।

राजेंद्र जी का मन्नू जी के साथ विवाह, यह घटना उनके साहित्य की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। विवाह से पहले राजेंद्र यादव का कोई मानसिक साथी नहीं था। विवाह के बाद मन्नू के रूप में उन्हें मानसिक साथी और आर्थिक सहारा मिल गया। विवाह के पश्चात् आर्थिक, मानसिक तथा लेखकीय समस्याओं के मोर्चों पर मन्नूजी का सहारा पाकर निरंतर लड़ते रहे। वे निरंतर लिखते रहे। मन्नू जी भी एक सफल लेखिका हैं। राजेन्द्र जी और मन्नू जी ने मिलकर एक उपन्यास 'एक इंच मुस्कान' लिखने लगे जो हिंदी साहित्य की नवीन उपलब्धि माना जाता है। इसी बीच में 17 जून 1961 को उनके घर एक पुत्री का जन्म हुआ। जिसका नाम दोनों ने मिलकर 'रचना' रखा।

राजेन्द्र जी और मन्नू जी दोनों लोगों का उद्देश्य एक ही था- लेखन। लेकिन दोनों के स्वभाव में बहुत अंतर था। राजेन्द्र जी का स्वभाव शांत एवं एकाग्रचित, जबकि मन्नू जी का स्वभाव ज्यादा बोलने वाला, खिच-खिच करने वाला था, फिर भी राजेन्द्र जी इनसे बहुत खुश रहते थे। वे स्वयं बताते हैं कि- "सबसे अधिक सुख का क्षण वह होता है, जब मैं चुपचाप मेज पर बैठकर कुछ पढ़ने की कोशिश कर रहा होता हूँ और मन्नू कुछ-न-कुछ बोल रही होती है।"20

पति के रूप में मित्र :

राजेन्द्र जी और मन्नू जी का वैवाहिक जीवन सफल रहा। राजेन्द्र जी अपने वैवाहिक जीवन को एक नवीन प्रयोग मानते हैं। सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से पति-पत्नी के सम्बंध को बनने-बिगड़ने के सन्दर्भ में अनेक कारणों का विश्लेषण किया जा सकता है। परन्तु साहित्यिक क्षेत्र में उन दोनों के बीच समस्तरीय मित्रता का नाता देख

सकते हैं। उन लोगों में साहित्यिक क्षेत्र के विभिन्न विषयों को लेकर मतभेद नहीं मिलता। दोनों में मेल और समन्वय की भावना थी। वे पति-पत्नी के रूप में नहीं बल्कि मित्र के रूप में साथ रहते थे। वे आधुनिक जीवन जीने के आकांक्षी हैं। दोनों लोग एक-दूसरे पर कोई बंधन या दबाव डालना स्वीकार नहीं करते। राजेन्द्र जी बताते हैं कि- "हम पति-पत्नी बाद में बने, मित्र पहले बने। मन्नू एक स्थापित लेखिका और सुदृढ़ चरित्र की महिला हैं। उनका अपना अलग और स्वतंत्र व्यक्तित्व है। मेरा भी अपना अलग अस्तित्व-व्यक्तित्व है।"21 इन लोगों में पारंपरिक पति-पत्नी का रिश्ता न होकर एक संवेदनशील और सच्चे मित्र का है। दोनों पति-पत्नी के रुप में साथ रहते हुए एक दूसरे के व्यक्तित्व का आदर करते हुए अपनी-अपनी जिंदगी जीते हैं।

राजेन्द्र जी ने अपनी पत्नी में समझदारी और अद्‌भुत लेखन की कुशलता देखी थी। अतः उन्होंने उसे पूरी स्वतंत्रता प्रदान कर हमेशा कुछ लिखने को प्रोत्साहित किया। वे नारी मुक्ति के समर्थक हैं। यही कारण है कि विवाह के बाद भी मन्नू यादव न बनकर मन्नू भंडारी ही बनी रहीं। इस प्रकार अपने सफल वैवाहिक जीवन में हमेशा वे दोनों एक-दूसरे से मित्र के समान ही पेश आये। दोनों लोगों की मित्रता के कारण उनका लेखन विवाह के पूर्व एवं विवाह के बाद भी रहा। परन्तु राजेन्द्र जी की अपेक्षा मन्नू जी का लेखन कम हुआ। क्योंकि मन्नू जी पर नौकरी और परिवार का बोझ था। राजेन्द्र जी के लिए लेखन पहले परिवार बाद में जबकि मन्नू जी के लिए परिवार पहले लेखन बाद में।

परिवार का पूरा बोझ मन्नू जी पर ही था इस बात को राजेन्द्र जी स्वीकार करते हैं- "मैं पति की जिम्मेदारी उठाने के काबिल नहीं था। जब साथ रहने के दौरान एक-दूसरे की अनुपस्थिति ज्यादा सुखकर लगने लगे तो समझना चाहिए कि संबंधों का यह स्वरुप ज्यादा नहीं चलेगा... यह दोनों की रचनात्मकता के लिए घातक है। तकलीफ मुझे यह है कि मेरे मुकाबले मन्नू की रचनात्मकता इससे ज्यादा प्रभावित हुई।"22 आगे चलकर दोनों के मतभेद काफी हद तक बढ़ गये जो उनकी रचनात्मकता के लिए हानिकारक हो गया। अपने मनमुटाव को दूर करने एवं मित्रता को बनाये रखने के लिए दोनों लोग अलग-अलग

रहना स्वीकार किये। मन्नू जी भी यह मानती हैं कि राजेन्द्र जी एक पति की अपेक्षा मित्र तथा पिता के रूप में अच्छे थे।

पिता के रूप में :

राजेन्द्र जी के व्यक्तित्व का परिचय एक पिता के रूप में भी देखने को मिलता है। उनकी एकमात्र बेटी 'रचना' के जन्म से सारी जिम्मेदारी मन्नू जी पर था क्योंकि राजेन्द्र जी उसे देखने, संभालने को तैयार नहीं थे। रचना की परवरिश में उनकी मौसी सुशीला का भी योगदान है। मन्नू जी को कॉलेज जाना होता तब वे रचना को मौसी के पास छोड़ जाती तथा वापस आते समय ले आती थी।

राजेन्द्र जी अपनी बेटी से बहुत प्यार करते थे। उन्होंने रचना के पालन-पोषण में कोई कमी नहीं छोड़ी। राजेन्द्र जी नरम स्वभाव के है तो मन्नू जी सख्त स्वभाव की। रचना कोई भी सरारत करती तो राजेन्द्र जी कुछ नही बोलते, इस कारण राजेन्द्र जी को मन्नू जी की डाँट सुननी पड़ती थी। बेटी के साथ की एक घटना को राजेन्द्र जी बताते हैं कि- "जिंदगी में एक बार मैंने रचना को रोते हुए देखकर एक चाटा मारा था परन्तु बाद में खुद रोया था। तब से बेटी को डाँटना भी मुझे कभी पसंद नहीं आया।"23

आदतें और शौक :

राजेन्द्र जी के आदतें और शौक के बारे में मन्नू जी कहती है कि- "पत्र लिखना और पत्रों की प्रतीक्षा करना इनकी प्रमुख हॉबी है। इतने पत्र लिख लेना, मेरे लिए तो सचमुच ही आश्चर्य का विषय है। टेलीफोन पर लंबी-लंबी बातें करना, घर में कोई भी आ जाए- बड़े ही खुले दिल से उसका स्वागत करना, मनुहार करके उछल-उछलकर उसे खिलाना और इसी चक्कर में स्वयं सबसे ज्यादा खा लेना, दूसरों को हँसाना और खुद भी खुलकर हँसना, मिले तो सारे दिन कॉफी पीना, सिगरेट फूँकना, रात में देर-देर तक घूमना-ये सारी कुछ विशेषताएँ हैं, जिनके बिना राजेन्द्र की कल्पना अधूरी रह जाती है। यों अच्छे-अच्छे कपड़े

और सेंट-वेंट का भी शौक है, पर फटे और मुड़े हुए कपड़े पहनकर निकल जाने में भी कोई संकोच नहीं। बढ़िया-से-बढ़िया रेस्तरां में और फुटपाथ पर बने किसी गंदे से ढाबे में ये समान भाव से भोजन कर लेते हैं। जो कुछ भी सामने आ जाए, छककर खा लेना, किसी भी स्थिति में कैसे ही मानसिक कष्ट में रहकर भी, लेटते ही पाँच मिनट में खर्र-खर्र करके खर्राटे खींचने लगना- मेरे लिए सचमुच ईर्ष्या के विषय हैं।"24 राजेंद्र यादव जी बड़े ही सरल स्वभाव वाले व्यक्ति थे। खुले विचार वाले स्पष्ट वक्ता थे।

मार्गदर्शक एवं मददगार :

इन्सान जब कामयाबी की बुलंदियों पर हो तो दूसरों के प्रति उसका ध्यान नहीं जाता लेकिन राजेन्द्र जी की प्रवृत्ति वैसी नहीं थी। वे हमेशा दूसरों के मददगार साबित हुए। इस विषय पर मन्नू जी कथन देखते हैं- "अपने लिखने के प्रति ये जितने निष्ठावान हैं, दूसरों को लेखक बना देने की दिशा में भी उतने ही उत्साही। यदि किसी में जरा-सी भी प्रतिभा इन्हें दिखाई दे जाए तो उसे हर प्रकार से मदद करना, प्रेरित करना, उसके साथ घंटों बरबाद करना इन्हें नहीं अखरता। कलकत्ते में जब नया-नया घर बसाया था, संयोग से नौकर भी कहानीकार ही मिला था। जिस दिन इस रहस्य का उद्‌घाटन हुआ, उसके दूसरे दिन ही इन्होंने उसकी सारी कहानियां सुनीं, फिर दो घंटे बैठकर, बड़ी गम्भीरता से उसे कहानी की टेक्नीक पर भाषण देते रहे। उसके बाद हालत यह थी कि घर का काम कोई नहीं करता था; बस, हम तीनों बैठकर कहानियां लिखते थे।"25 राजेंद्र जी घंटों लोगों के साथ बिना बोर हुए बैठ सकते है और लेखन तकनीक पर बात कर सकते हैं।

निःस्वार्थी :

आज के समय में इंसान हर संबंध में स्वार्थ खोजता दिखाई देता है। हर संबंध में कुछ न कुछ प्राप्त करने की लालसा समाज में फैली हुई है। राजेन्द्र जी ने जो संबंध बनाए थे उसमें दोनों तरफ से कोई मतलब नहीं है। राजेन्द्र जी के शब्दों में- "मेरे तो दसियों बरसों

के दर्जनों ऐसे संबंध हैं- जहाँ दोनों ओर से कभी-कोई मतलब नहीं निकाला जा सका- यों साथ हैं तो दुःख-सुख की हिस्सेदारी तो है ही।"26 उन्होंने कभी कोई संबंध स्वार्थ के कारण नहीं बनाए। इसी कारण उनके संबंध लम्बे समय तक एक-दूसरे के साथ टिके रहे।

स्वाभिमानी एवं संवेदनशील :

राजेन्द्र जी का व्यक्तित्व स्वाभिमानी, स्वतंत्रता, संवेदनशील एवं सिद्धांतों वाला था। जहाँ भी उन्हें लगा कि उनका स्वाभिमान कुचल जा रहा है वहाँ वे नहीं रुके। 'ज्ञानोदय' की नौकरी इसीलिये छोड़ी। राजेन्द्र जी अपने लेखन एवं जीवन में इन बातों से कभी भी समझौता नहीं किया। राजेन्द्र जी हिंदी साहित्य के उन लेखकों में से हैं जिन्होंने लेखन को स्वतंत्र पेशे के रूप में अपनाया। बाजारू माँग या लोकरुचि के लिए कूड़ा-कचरा लिखना उनका स्वभाव नहीं था। केवल पैसे के लिए लिखना उनका लक्ष्य नहीं था। उन्होंने अपनी लेखनी से समाज में चली आ रही अनैतिकताओं के बारे में तथा समाज के सामने एक आदर्श स्थापित हो उसके बारे में लिखा। राजेन्द्र जी बताते हैं कि- "लेखन बेहद नाजुक, स्वतंत्र और पवित्र फूल की तरह है और उसे हर प्रदूषण या गर्म हवा से बचाकर रखना है, इस कुण्ठा ने मुझे कहाँ कुछ भी करने दिया? मैं खुशामदें और नौकरियाँ कर सकता था, सम्मान और पुरस्कार ले सकता था, समझौता और सौदें कर सकता था।....मगर अपनी इस कुण्ठा का क्या करूँ जो हर बार हाथ पकड़ लेती है कि जो पूरे सम्मान से और अपनी शर्तों पर मिलेगा वही लेना है।"27 उन्होंने कभी भी शर्त वाली कोई नौकरी नहीं की। सदैव स्वतंत्र जीवन बिताया।

लेखन के प्रति राजेन्द्र यादव का दृष्टिकोण :

लेखन कार्य राजेन्द्र जी की प्रिय वस्तु थी। लेखन के प्रति उदासीनता उन्हें अखरती थी। यहाँ तक कि अपनी शादी का फैसला भी इसी कारण किया। वे स्वयं बताते है कि-

"मन्नू, मैंने शादी तुम्हें सफल अध्यापिका समझकर नहीं कि थी, बहुत अच्छी लेखिका मानकर की थी "28

इस तरह लेखन चाहे अपना हो या दूसरों का, उन्हें प्रिय लगता है। लेखन के बारे में अनुभव की प्रामाणिकता का समर्थन करते थे। राजेन्द्र जी का मानना है कि लेखक के जीवन के प्रति गहरे अनुभव को प्रस्तुत करने पर उसकी रचना में जन मानस की सच्ची अभिव्यक्ति होती है। राजेन्द्र जी अपने लेखन के बारे में किसी से कुछ भी चर्चा नहीं करते, लिखने के पहले व लिखने के बाद भी। वे अपने लिखे हुए अप्रकाशित लेखों के बारे में खुलकर बोलना या लिखे हुए लेखों को खुला छोड़ना उनके स्वभाव के खिलाफ है। और उनका यही विचार उनके लेखन की सबसे बड़ी ताकत है। हम लोग देख सकते हैं कि लेखक अपने लेखों के बारे में खूब चर्चा करता है लेकिन राजेन्द्र जी ऐसा नहीं करते। वे अपने लिखे जाने वाले विषय पर कभी भी चर्चा नहीं करते। इसके बारे में मन्नू जी बताती है कि- "जो व्यक्ति अपने लेखन में ही इस तरह डूबा रहता है, वह कैसे अपनी लिखी हुई और लिखी जाने वाली चीजों के बारे में इतना चुप रह पाता है? उस सबके अनुपात में तो इनके बोलने, सोचने, लिखने सभी का विषय 'अपना साहित्य' ही होना चाहिए था लेकिन जो कुछ लिखा जा चुका है, उसे लेकर बातें करते हुए मैंने इन्हें शायद ही कभी सुना हो। कभी कोई विशेष रचना का हवाला देकर सवाल कर भी दे तो उसका उत्तर कुछ ऐसे भाव और संक्षिप्त रूप में दे देंगे, मानो उससे न इन्हें विशेष लगाव हैं, न उसमें विशेष रुचि। अकसर ही साहित्यकार अपनी लिखी हुई चीजों को बड़ा रस ले-लेकर, परम तृप्ति और 'नारसीसस-भाव, से उन्हें पूरा-का-पूरा दोहराते रहते हैं; लेकिन इस विषय में इनकी निःस्पृहता सचमुच ही बेहद अविश्वसनीय है।"29

राजेन्द्र जी का मन लेखन का ऐसा समुद्र था जिसके बारे केवल वही जानते थे। अपने मन रूपी समुद्र में वे एकांत में घंटों बिताते और अपने जरूरत की चीज ढूढ़कर ही बाहर निकलते थे। वे अपनी रचनाओं के बारे में बताते हैं- "मैं लिखने और छपने के बाद अपनी हर रचना को भूल जाता हूँ और शायद ही दूबारा पढ़ता हूँ। लिखता डूबकर हूँ फिर उससे पूरी तरह मुक्त हो जाता हूँ।"30 इसके बाद वे नये कार्य के बारे में चिंतन करते है ।

निष्कर्ष :

हिंदी के जाने माने साहित्यकार राजेन्द्र यादव का जन्म एक संयुक्त परिवार में हुआ था। जहाँ का माहौल शैक्षिक था जिसके कारण राजेन्द्र जी पर भी अच्छे संस्कार का प्रभाव पड़ा। इन्हीं संस्कारों के कारण राजेन्द्र यादव आगे चलकर एक अच्छे साहित्यकार हुए और साहित्य निर्माण में अपना योगदान कर सके। अपनी शारिरिक विकलांगता की क्षति पूर्ति के लिए उन्होंने अपने को साहित्य निर्माण में न्यौछावर कर दिया। राजेन्द्र जी का व्यक्तित्व जितना सरल है उतना ही कठिन भी। पत्र लिखना, दूसरों के पत्रों का इंतज़ार करना उनका शौक है। दूसरों की मदद करना और उनका मार्गदर्शन करना राजेन्द्र जी के स्वभाव का अभिन्न अंग है। उनके स्वाभिमान को ठेस पहुँचता, वहाँ वे नहीं रुकते। राजेन्द्र जी ने लेखन को स्वतंत्र पेशा के रूप में अपनाया। लेकिन कुछ भी लिख देना उनके स्वभाव में नहीं था। स्वाभिमानी एवं संवेदनशीलता उनके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण पक्ष हैं। उनके खुद के अनुभव उन्हें जीवन जीने और लिखने के लिए प्रेरणा देते थे। एक दूसरे के व्यक्तित्व का सम्मान करने के कारण राजेंद्र जी और मन्नू जी का विवाह दो लेखकों का एक साथ जुड़ा सहयोगी जीवन है।

उपरोक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि राजेन्द्र यादव जी का व्यक्तित्व हमारे सामने एक आदर्श है। उनका व्यक्तित्व गतिशील बनाये रखने की प्रेरणा हमें देता है।

राजेन्द्र यादव का कृतित्त्व :

नई पीढ़ी के रचनाकारों में राजेन्द्र यादव जी का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने तेरह-चौदह साल से ही लिखना शुरू कर दिया था। हिंदी साहित्य की प्रायः सभी विधाओं में लेखन कार्य करने में उनका एक समान अधिकार है। प्रेमचंद के बाद हिंदी कथा साहित्य में कथ्य एवं शिल्प की नवीनता को लेकर यथार्थ के धरातल पर राजेंद्र यादव ने नये प्रयोग किए। राजेन्द्र जी अनुभूति की गहराई को साहित्य सृजन के लिए महत्वपूर्ण मानते थे।

क्योंकि इससे यथार्थ का साहित्य में समावेशन होता है। इस कारण उनकी सभी रचनाएँ जीवन का अर्थ खोजती है। उनकी रचनाओं की लोकप्रियता का यही महत्वपूर्ण कारण है।

बचपन से ही दूसरों से कहानियाँ सुनना और पढ़ने का शौक था। यही शौक आगे चलकर उनके जिंदगी का अभिन्न अंग बन गया। बचपन मे उन्हें भिक्खी चाटवाला अनेक प्रकार की कहानियाँ सुनाया करते थे। राजेन्द्र जी के पिता जी ने भी उन्हें तिलस्मी, जासूसी एवं जादुई उपन्यासों को पढ़कर सुनाया करते थे। पिता जी से "चंद्रकांता संतति" उपन्यास के किस्से सुने थे। इस तरह बचपन में उनके मन-मस्तिष्क पर कहानियों का नशा सा चढ़ गया।

राजेन्द्र यादव जी की "पहली कहानी 'प्रतिहिंसा' 'कर्मयोगी' पत्रिका में छपी। 'कर्मयोगी' पत्रिका इलाहाबाद से रामराज सहगल निकालते थे। उन दिनों की अन्य पत्रिकाओं की अपेक्षा यह अच्छी और महंगी पत्रिका थी। जब अन्य पत्रिकाओं का मूल्य आठ आने तक था, तब कर्मयोगी एक रुपये में मिलती थी। इसके साथ मैंने हंस में भी लिखा। तब हंस को अमृतराय निकाला करते थे।"31 इन्हीं सब चीजों से प्रभावित होकर राजेन्द्र जी देवगिरि को केंद्र में रखकर एक उपन्यास लिखा। जो उनका एक प्रयास था। उपन्यास लेखन से शुरू करके ब्रज में कविताएँ भी लिखी। लेकिन अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए कविता का क्षेत्र सीमित लगा तो कविता छोड़ दिये। बचपन से ही उन्हें उपन्यास पढ़ना और लिखना पसन्द था। अपने अनुभवों को मूर्त रूप देने के लिए उपन्यास विधा उन्हें उपयुक्त लगी। जब राजेन्द्र जी पढ़ाई के लिए झाँसी आये, तब उन्हें उनके नानाजी पत्रों के माध्यम से सलाह देते थे कि वे वीर सावरकर की रचनाएँ पढ़े। उनके नानाजी जी ने पत्रों के माध्यम से उन्हें कहानियाँ लिखने के लिए प्रेरित करते थे। परन्तु राजेन्द्र जी कहानी से ज्यादा उपन्यास में रूचि रखते थे। इसलिए उन्होंने अपने नानाजी जी को पत्र लिखा- "आप जितना भी कहिए, मैं कहानियाँ नहीं लिखूँगा। जब कोई उपन्यास लिख सकता है, तो कहानी क्यों लिखें?"32 राजेन्द्र जी कहानी को सीमित मानते थे जबकि उपन्यास को अपने अनुभव और संवेदना की अभिव्यक्ति का विस्तृत साधन मानते थे।

लेकिन आगे चलकर कहानी में उनकी अरुचि रूचि में बदलकर स्वतंत्रता के बाद हिंदी के प्रतिष्ठित कहानीकार बनें।

राजेन्द्र जी प्रारंभिक लेखन पर काल्पनिक, तिलिस्मी, जादुई कथा-कहानियों का प्रभाव रहा था। उन्होंने प्रारंभ में ऐतिहासिक, तिलिस्मी उपन्यास भी लिखें थे। राजेन्द्र जी बताते हैं कि- "लिखना तो मैंने तेरह-चौदह साल की उम्र से ही शुरू कर दिया था। तब मैं जासूसी-तिलिस्मी किस्म की चीजें लिखता था। भक्त था, सत्यनारायण की पूरी कथा ब्रजभाषा में लिख डाली थी। इसी तरह की उलटी-सीधी चीजें लिखता था। छोटे-मोटे दैनिकों में लिखा होगा। लेकिन बाकायदा लिखने और छपने की शुरुआत हुई 'कर्मयोगी' से।... वहीं से मैं अपना लिखना मानता हूँ। इससे पहले कई खण्डों में एक ऐतिहासिक-तिलिस्मी उपन्यास और रोमांटिक किस्म के तीन उपन्यास उलटे-सीधे ढंग से लिख डाले थे। मतलब डेढ़-दो हजार पन्ने लिखे। उन्हें नष्ट कर दिया यह मानकर कि वह मेरे रियाज का पीरियड था।"33

आज राजेन्द्र जी का रचना साहित्य विविध विधा के रूप में उपलब्ध है। उन्होंने उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, इंटरव्यू, आलोचना एवं संपादकीय आदि रूप में रचनाएँ लिखे हैं। राजेंद्र यादव जी की पहली प्रकाशित कहानी संभवत: **'प्रतिहिंसा'** है, जो मई 1947 में रामवृक्ष सिंह सहगल के पत्र **'कर्मयोगी'** में छपी थी। जो प्रयागराज से प्रकाशित होती थी। इसके पहले देवगिरी को केंद्र में रखकर एक उपन्यास लिखने का प्रयास किया था। कालांतर में हंस, गुलदस्ता, अप्सरा आदि पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ छपने का सिलसिला शुरू हुआ। राजेन्द्र जी की प्रथम उल्लेखनीय रचना **'खेल-खिलौने'** है। जब वे एम.ए. कर रहे थे तभी यह कहानी लिखी थी। एम.ए. के बाद उन्होंने **'प्रेत बोलते हैं'** उपन्यास लिखा जो 1951 ई. में प्रकाशित हुआ। बाद में यह उपन्यास कुछ बदलावों के साथ सन् 1960 ई. में **'सारा आकाश'** नाम से प्रकाशित हुआ। बाद में 'सारा आकाश' पर बासू चटर्जी द्वारा सन् 1972 ई. फ़िल्म बनाई।

वर्तमान प्रकाशक किस तरह लेखकों का शोषण करते हैं और लेखकों के आत्मसम्मान को चोट पहुँचते हैं ये सब राजेन्द्र जी से देखा नहीं गया। इसलिए वे सन् 1965

ई. में **'अक्षर प्रकाशन'** नामक संस्था की स्थापना की। अक्षर प्रकाशन की स्थापना के समय राजेन्द्र जी एक चर्चित कहानीकार, उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। उनके उपन्यास 'उखड़े हुए लोग' में जो औपन्यासिक प्रतिभा दिखाई देती है वैसा अन्य उपन्यासों में नहीं।

राजेन्द्र जी ने नए लेखकों को प्रकाश में लाने के लिए सन् 1986 ई. में **'हंस'** मासिक पत्रिका का संपादन प्रारंभ किये। 'हंस' आज भी अपने समय के साथ चल रही है। कथाकार राजेंद्र यादव जी 'हंस' पत्रिका के माध्यम से दिखा दिया है कि हिन्दी में समानांतर या वैकल्पिक पत्रकारिता कैसे संभव है।

राजेंद्र यादव जी हिंदी की नई कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। नई कहानी के प्रमुख सूत्रधारों में राजेंद्र यादव का स्थान विशिष्ट है। यादव जी ने स्वतंत्रता मिलने के 24 वर्ष पहले कहानी लिखना प्रारंभ किया और साहित्य सृजन को दिल से अपनाया। उन्होंने कभी पैसों के लिए या फिर राजनीतिक रूप से फायदे के लिए नहीं लिखा। कहानी, उपन्यास, आलोचना, निबंध, अनुवाद आदि विधाओं में सफलता पूर्वक कलम चलाने के साथ ही अनेक पुस्तकों का संपादन तथा साहित्यिक पत्रिका 'हंस' का संपादन हिंदी साहित्य में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वे साहित्य के प्रति समर्पित रहे। और दबाव मुक्त होकर अपने लेखन को स्तरीय और प्रामाणिक बनाये रखने में हमेशा प्रयत्नशील रहें।

राजेन्द्र जी के द्वारा रचित साहित्यिक कृतियों का विवरण निम्नलिखित है –

राजेन्द्र यादव की कृतियाँ

उपन्यास :

1.	प्रेत बोलते हैं	प्रथम संस्करण सन् 1951
2.	सारा आकाश	प्रेत बोलते हैं का नवीन रूप, प्रथम संस्करण सन् 1960
3.	उखड़े हुए लोग	प्रथम संस्करण सन् 1956
4.	कुलटा	प्रथम संस्करण सन् 1957
5.	शह और मात	प्रथम संस्करण सन् 1959
6.	एक इंच मुस्कान	(मन्नू भंडारी के साथ) प्रथम संस्करण सन् 1961
7.	अनदेखे अनजान पुल	प्रथम संस्करण सन् 1963
8.	मंत्र विद्ध	प्रथम संस्करण सन् 1967
9.	एक था शैलेंद्र	प्रथम संस्करण सन् 2006

कहानी :

1.	रेखाएँ, लहरें और परछाइयाँ	प्रथम संस्करण सन् 1950
2.	देवताओं की मूर्तियाँ	प्रथम संस्करण सन् 1952
3.	खेल-खिलौने	प्रथम संस्करण सन् 1954
4.	जहाँ लक्ष्मी कैद है	प्रथम संस्करण सन् 1957
5.	अभिमन्यु की आत्महत्या	प्रथम संस्करण सन् 1959
6.	छोटे-छोटे ताजमहल	प्रथम संस्करण सन् 1961
7.	किनारे से किनारे तक	प्रथम संस्करण सन् 1963
8.	टूटना	प्रथम संस्करण सन् 1966

9.	अपने पार	प्रथम संस्करण सन् 1968
10.	प्रिय कहानियाँ	प्रथम संस्करण सन् 1971
11.	ढोल	प्रथम संस्करण सन् 1972
12.	श्रेष्ठ कहानियाँ	प्रथम संस्करण सन् 1983
13.	चौखटे तोड़ते त्रिकोण	प्रथम संस्करण सन् 1987
14.	श्रेष्ठ कहानियाँ	
15.	प्रतिनिधि कहानियाँ	
16.	प्रेम कहानियाँ	
17.	चर्चित कहानियाँ	
18.	मेरी पच्चीस कहानियाँ	
19.	अब तक की समग्र कहानियाँ, यहाँ तक, पड़ाव -1, पड़ाव -2 :1989	प्रथम संस्करण सन् 1989
20.	हासिल और अन्य कहानियाँ	प्रथम संस्करण सन् 2006
21.	नरक ले जाने वाली लिफ्ट (विदेशी कहानियाँ)	प्रथम संस्करण सन् 2006

बाल साहित्य :

1.	परी नहीं मरती	प्रथम संस्करण सन् 1978
2.	घर की तलाश	प्रथम संस्करण सन् 1978

कविता :

1	आवाज तेरी है	प्रथम संस्करण सन् 1960

समीक्षा :

1.	कहानी : स्वरूप और संवेदना	प्रथम संस्करण सन् 1960
2.	प्रेमचन्द की विरासत	प्रथम संस्करण सन् 1978
3.	अठारह उपन्यास	प्रथम संस्करण सन् 1981
4.	औरों के बहाने	प्रथम संस्करण सन् 1981
5.	काँटे की बात (बारह खण्ड)	प्रथम संस्करण सन् 1994
6.	कहानी : अनुभव और अभिव्यक्ति	प्रथम संस्करण सन् 1996
7.	उपन्यास : स्वरूप और संवेदना	प्रथम संस्करण सन् 1998
8.	आदमी की निगाह में औरत	प्रथम संस्करण सन् 2001
9.	वे देवता नहीं हैं	प्रथम संस्करण सन् 2001
10.	मुड़ मुड़ के देखता हूँ (आत्मकथ्य)	प्रथम संस्करण सन् 2001

अनुदित रचनाएं :

	अनुदित उपन्यास	**मूल लेखक**
1.	टक्कर	ऐन्तोन चेखव
2.	हमारे युग का एक नायक	लर्मन्तोव

3.	प्रथम प्रेम	तुर्गनेव
4.	वसंत-प्लावन	तुर्गनेव
5.	एक मछुआ : एक मोती	स्टाइनबैक
6.	अजनबी	कामू
	यह सभी उपन्यास कथा शिखर के	नाम से दो खण्डों में प्रकाशित है - प्रकाशन वर्ष 1994
7.	संत सर्गीयस	टॉलस्टॉय
	अनुदित नाटक	**मूल लेखक**
1.	हंसनी	चेखव
2.	तीन बहनें	चेखव
3.	चेरी का बगीचा	चेखव

संपादन :

1.	'हंस' पत्रिका	अगस्त 1986 से अक्टूबर 2013
2.	एक दुनिया समानान्तर	सन् 1967
3.	कथा-दशक : हिंदी कहानियाँ	सन् 1990
4.	मेरे साक्षात्कार	सन् 1994
5.	आत्मतर्पण	सन् 1994
6.	अभी दिल्ली दूर है	सन् 1995
7.	काली सुर्खियाँ (अश्वेत कहानी संग्रह)	सन् 1995
8.	कथा-यात्रा	सन् 1981
9.	अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य	सन् 2000

10.	औरत : उत्तर कथा	सन् 2001
11.	पितृसत्ता के नए रूप	सन् 2003
12.	देहरी भई विदेश	सन् 2005
13.	कथा-जगत की बागी मुस्लिम औरतें	सन् 2006
14.	अब वे वहाँ नहीं रहते	सन् 2006
15.	वक्त है एक ब्रेक का	सन् 2007

इंटरव्यूव :

1.	एंटन चेखव : एक इंटरव्यूव	

निष्कर्ष :

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि राजेन्द्र यादव जी का व्यक्तित्व लेखकीय व्यक्तित्व है। बचपन से ही उन्होंने कहानियाँ सुनी और उन पर कहानियों का प्रभाव पड़ा। उसी समय से लेखन करते रहे हैं। जैसे-जैसे बड़े हुए समझदारी बढ़ी तो उनके लेखन में भी गहराई आ गयी। उन्होंने लेखन को ही अपना सब कुछ मानकर उसके प्रति ईमानदारी से समर्पित हो गए। वे लेखन को स्तरीय बनाने के आकांक्षी हैं। यही कारण है कि वे बाजार की माँग के अनुसार कभी लेखन नहीं किये। नए-नए चीजों के पीछे भागना उनका शौक था और ये शौक उनके प्रत्येक उपन्यास में नयापन का एहसास कराता है। एक अच्छे उपन्यासकार और कहानीकार होने के साथ ही साथ वे एक अच्छे कवि, समीक्षक, अनुवादक, संपादक तथा प्रकाशक भी हैं।

इस तरह राजेन्द्र जी के व्यक्तित्व का उनके लेखन पर पूर्ण प्रभाव दिखाई पड़ता है। स्वानुभूति और सृजनशीलता उनके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण पहलू है। उनकी लेखन यात्रा

उनके अनुभव की यात्रा है। अतः उनके प्रत्येक रचना की विषयवस्तु में विविधता दिखाई देती है। जिससे उनकी व्यापक जीवनानुभूति परिलक्षित होती है।

*****

सन्दर्भ ग्रंथ :

1. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-134-135
2. वही...पृ.सं.–7
3. राजेंद्र यादव के उपन्यासों में नारी – डॉ नितीन सुरेशराव माने, पृ.सं.-12
4. वही...पृ.सं.–13
5. वही...पृ.सं.–13
6. वही...पृ.सं.–14
7. राजेंद्र यादव कृत उखड़े हुए लोग : संवेदना और शिल्प-डॉ मोहन सावंत, पृ.सं.-17
8. राजेंद्र यादव के उपन्यासों में नारी – डॉ नितीन सुरेशराव माने, पृ.सं.-15
9. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-83
10. वही...पृ.सं.–83
11. वही...पृ.सं.-82
12. वही...पृ.सं.-82
13. वही...पृ.सं.-113
14. वही...पृ.सं.-113
15. वही...पृ.सं.-114
16. मेरे साक्षात्कार – राजेंद्र यादव, पृ.सं.- 29
17. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-138

18. वही...पृ.सं.-146

19. वही...पृ.सं.-22

20. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-61

21. जवाब दो विक्रमादित्य – राजेंद्र यादव, पृ.सं.-89

22. वही...पृ.सं.-23

23. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में नारी- डॉ. रूपाश्री खेतान, पृ.सं.-30

24. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-151

25. वही...पृ.सं.-147

26. वही...पृ.सं.-90

27. सारिका मासिक – राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-33

28. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-

29. वही...पृ.सं.-150-51

30. जवाब दो विक्रमादित्य – राजेंद्र यादव, पृ.सं.-27

31. मेरे साक्षात्कार – राजेंद्र यादव, पृ.सं.-242

32. औरों के बहाने - राजेन्द्र यादव, पृ.सं.-142

33. जवाब दो विक्रमादित्य – राजेंद्र यादव, पृ.सं.-134